अध्याय – 9
पारसी, सिख एवं ताओ धर्म पंथ

(i) पारसी धर्म पंथ का सामान्य परिचय एवं विशेषताएं–

पारसी धर्म विश्व के प्रमुख धर्मो में एक महत्वपूर्ण स्थान है। इस धर्म के संस्थापक महात्मा जरथुस्त्र माने जाते हैं। ये जोरोष्टर (Zoroaster) के नाम से विख्यात थे। महात्मा जोरोष्टर द्वारा प्रवर्तित इस धर्म को जोरोष्ट्रीज्म (zoroasterism) भी कहते हैं। जरथुस्त्र का मूल नाम स्पितमा था। जिस प्रकार सिद्धार्थ ज्ञान प्राप्ति के पश्चात महात्मा बुद्ध कहलाये, उसी प्रकार स्पितमा को सिद्धि प्राप्ति के बाद लोगों ने जरथुस्त्र के नाम से विभूषित किया। जरथुस्त्र शब्द 'जरत' और 'उस्त्र' से मिलकर बना है। 'जरत' का अर्थ है –स्वर्ण तथा 'उस्त्र' का अर्थ है–'प्रभा मण्डित'। इस प्रकार जरथुस्त्र का अर्थ हुआ स्वर्णिम प्रभा से मण्डित व्यक्ति। इन्हें एक देवदूत के रूप में स्वीकार किया जाता है। इनका जन्म ईरान में हुआ था। ईश्वर स्वयं जरथुस्त्र के समक्ष प्रकट हुए थे। जिस प्रकार इस्लाम धर्म के संस्थापक मोहम्मद साहब के समक्ष जिब्राइल प्रकट हुए थे, उसी प्रकार जरथुस्त्र के समक्ष ईश्वर प्रकट हुए थे। इसलिए पारसी–धर्म को भी प्रकाशित धर्मो की श्रेणी में रखा जाता है।

जरथुस्त्र को 30 वर्ष की उम्र में सिद्धि प्राप्त हुई थी। सिद्धि प्राप्ति के पश्चात इन्होंने इस नवीन धर्म के उपदेशों को जनसाधारण तक पहुंचना आरम्भ किया। सर्वप्रथम इनके भतीजे ने इनके धर्म को स्वीकार किया। धार्मिक प्रचार प्रसार के दौरान इन्हें अनेक विरोधों का सामना करना पडा। प्रचलित धर्म के विरूद्ध नवीन धर्म का प्रचार करने के कारण शासक–वर्ग और पुरोहितजन इनके शत्रु हो गये। कुछ समय के पश्चात बैक्टेरिया के राजा इस धर्म के अनुयायी हो गये। बाद में ईरान के राजा ने भी इस धर्म को स्वीकार कर लिया। इस प्रकार समस्त ईरान में पारसी धर्म प्रचलित हो गया। पारसी धर्म में नैतिकता पर विशेष बल दिया गया है। यह धर्म शुभ और अशुभ नामक शक्तियों के मध्य संघर्ष का प्रतिनिधित्व करता है। शुभ और अशुभ के संघर्ष को इस धर्म का केन्द्र बिन्दु माना गया है। अशुभ पर शुभ की विजय में नैतिकता की भूमिका महत्वपूर्ण होती है। इसलिए नैतिकता इस धर्म का आधार है।

ईरान में इस्लाम के प्रभुत्व के स्थापित हो जाने के पश्चात पारसी धर्म के अनुयायियों का वहां रहना कठिन हो गया। कुछ समय तक वे अपने मूल देश को छोडकर बाहर घूमते रहे, किन्तु उन्हें कहीं भी प्रश्रय नहीं मिला। अन्त में जब उन्होनें गुजरात से भारत में प्रवेश किया तो स्थानीय तत्कालीन हिन्दू राजा ने उनका भव्य स्वागत किया। राजा के आदेशानुसार उन्हें पूर्ण सहायता और आश्रय दिया गया। यह तथ्य हिन्दू धर्म की सहिष्णुता और उदारता का परिचायक है। फारस की ओर से आने वाले ये लोग भारत में पारसी तथा इनका धर्म पारसी धर्म कहलाने लगा।

पारसी धर्म का प्रमुख धर्म–ग्रन्थ – पारसी धर्म का प्रमुख ग्रन्थ 'अवेस्ता' (Avesta) है। यह जेन्द भाषा में लिखा गया है। जेन्द (zend) संस्कृत के समरूप भाषा है। अवेस्ता का शाब्दिक अर्थ है–ज्ञान। अवेस्ता निम्न पांच भागों में विभक्त है –

1.यस्न (The Yasna) – यस्न अवेस्ता का महत्वपूर्ण अंग है। इसमें यज्ञ, पूजा–विधान का समावेश है। इसमें जरथुस्त्र के व्यक्तिगत वचन एवं उपदेश हैं। ये गाथा या मन्त्र कहलाता है।

2. वेन्दिदाद (The Vendidad)- इसमें शुद्धि के नियमों की चर्चा है। शत्रुओं के संहार सम्बन्धी विधानों की व्याख्या इसमें निहित है।

3. विस्पेरद (The Visperad)- इसमें पारसी कर्मकाण्ड का उल्लेख हुआ है। आराधना के समय इसके नियमों का पालन किया जाता है।

4. यस्त (Yashts)- इसमें मन्त्रों का संकलन है। इसमें देवताओं की स्तुतियों का वर्णन है, जिनका पालन विशेष अवसर पर किया जाता है।

5. खोर्द अवेस्ता (Khorda Avesta)- यह छोटे अवेस्ता के नाम से प्रसिद्ध है। इसमें उपासना के समय की जाने वाली स्तुतियों का वर्णन है।

पारसी धर्म में ईश्वर का स्वरूप :– पारसी धर्म में ईश्वर को अहुरमजदा (Ahura Mazda) कहा गया है। ईश्वर सर्व शक्तिमान, सर्वव्यापी और सर्वज्ञ है। वह इस जगत का सृष्टा, पालनकर्ता और प्रलयकर्ता है। ईश्वर का यह स्वरूप हिन्दू धर्म में भी स्वीकार किया गया है। पारसी–धर्म में ईश्वर न्यायप्रिय और दयालु माना गया है। ईश्वर में अनेक गुण हैं। इन अनेक गुणों में से कुछ प्रमुख इस प्रकार हैं– प्रकाश (Light), शुभमन (Good mind), उचित (Right), धर्मनिष्ठा (Piety), सम्पूर्णता (well-being), प्रभुत्व (Dominion) और अमरत्व (immortality)। अवेस्ता ग्रन्थ में अहुरमजदा के गुणों की व्याख्या इस प्रकार की गई है–''अहुरमजदा सृष्टा, दीप्तिमान, तेजस्वी, महान और सर्वोत्तम है। वह सर्वाधिक सुन्दर, पूर्णतः अटल, बुद्धिमान और पूर्ण है। वह सर्वाधिक उदार आत्मा है।''

ईश्वर को सर्वदृष्टा अर्थात सब कुछ देखने वाला, सर्वशक्तिमान अर्थात ईश्वर की शक्ति अनन्त है तथा न्याय का पिता कहा गया है, क्योंकि ईश्वर ही न्याय को कायम करता है। अहुरमजदा को नैतिकता का संस्थापक माना गया है। वह शुभ कर्मो के लिए पुरस्कार तथा अशुभ कर्मो के लिए दण्ड देता है। अहुरमजदा मूलतः शुभ और अच्छाई के देवता है। विश्व प्रत्येक शुभ वस्तु का श्रेय अहुरमजदा को है। अहुरमजदा की सृजनात्मक इच्छा शक्ति के क्रियात्मक सिद्धान्त को स्पेनता मेन्यू (Spenta Mainyu) कहते हैं। यह एक पवित्र सत्ता है। यह अहुरमजदा में ही निवास करती है। यद्यपि यह ईश्वर का अंग किन्तु ईश्वर से भिन्न है। यह ईश्वर की सृजनात्मक शाक्ति का प्रतीक है। इसके द्वारा ईश्वर जगत की सृष्टि करता है। हिन्दू धर्म में ईश्वर की सृजनात्मक शक्ति को माया और प्रकृति कहते हैं।

अहुरमजदा का विरोधी देवता अहरिमान (Ahriman) है। इन्हें अंगरामेन्यू (Angra Mainyu) भी कहते हैं। यह स्पेनतामेन्यू की विरोधी आत्मा है। इसकी तुलना अन्धकार से की गई है। अहुरमजदा और अहरिमान के मध्य निरन्तर संघर्ष चलता रहता है। इन दोनों विरोधी शक्तियों के मध्य होने वाले निरन्तर संघर्ष के कारण कुछ विचारकों ने पारसी धर्म को द्वैतवादी स्वीकार किया है। किन्तु यह धारणा सही नहीं है। अहुरमजदा शाश्वत तत्व है, जबकि अहरिमान नाश्वान है। एक निश्चित समय के पश्चात अहरिमान का विनाश होता है। ज्योंही यह विश्व पूर्ण होगा, वैसे ही इस सत्ता का अन्त हो जायेगा। अहुरमजदा भूतकाल में था, वर्तमानकाल में है और भविष्य में भी रहेगा, किन्तु अहरिमान भूत में था, वर्तमान में है किन्तु भविष्य में समाप्त हो जायेगा। यह धर्म एक निश्चित समय का संकेत करता है, जब अहुरमजदा अहरिमान पर विजय प्राप्त करेगा। बारह हजार वर्ष के पश्चात अहुरमजदा अहरिमान पर विजय प्राप्त कर लेगा। इस प्रकार अहुरमजदा शाश्वत है, जबकि अहरिमान नश्वर। अतः पारसी धर्म एकेश्वरवाद का समर्थक है।

अशुभ की समस्या– अशुभ की समस्या प्रत्येक धर्म की एक प्रमुख समस्या है। पारसी धर्म में अशुभ की समस्या के समाधान के लिए तर्कसंगत प्रयास किया गया है। इस धर्म में अशुभ को वास्तविक माना गया है। अशुभ और शुभ के मध्य संघर्ष निरन्तर चलता रहता है। पारसी धर्म के अनुसार अशुभ का कारण अहरिमान को माना गया है। यह शुभ का शत्रु है। यह विश्व में व्याप्त अशुभ, बुराई, पाप और अन्याय के लिए उत्तरदायी है। यह अन्धकार का प्रतीक है। प्रत्येक व्यक्ति अपने जीवन में अशुभ के साथ संघर्ष करता है। इस धर्म के अनुसार यह विश्व अपनी सभी अवस्थाओं में अपूर्ण है। मनुष्य का कर्तव्य इसे पूर्ण बनाना है। यह विश्व एक युद्ध भूमि है। यहां प्रत्येक मनुष्य एक सैनिक के रूप में है। जो मनुष्य इस संग्राम से पलायन कर जाता है, वह कायर है। इस प्रकार मनुष्य और अहुरमजदा दोनों मिलकर अशुभ का विरोध करते हैं। मनुष्य का परम उद्देश्य सुख प्राप्त करना नहीं है अपितु शुभ के लिए निरन्तर प्रयत्नशील रहना और अशुभ पर विजय प्राप्त करना है। जरथुस्त्र ने शुभ के साथ–साथ अशुभ के महत्व को भी स्वीकार किया है। जीवन में इन दोनों परस्पर विरोधी शक्तियों का महत्व है, क्योंकि अशुभ की उपस्थिति में ही शुभ का मूल्य ज्ञात होता है एक की उपस्थिति से दूसरे का मूल्य या महत्व जाना जाता है। जीवन में सुख जितना सहायक है, उतना ही दुःख भी महत्वपूर्ण है, क्योंकि दुःख ही मनुष्य को संघर्षशील बनाता है। अशुभ के अभाव में शुभ का वास्तविक मूल्यांकन करना कठिन है। अतः पारसीधर्म में अशुभ को शुभ का मापदण्ड बताया गया है।

पारसी धर्म के मूल सिद्धान्त–पारसी धर्म के तीन मूलभूत सिद्धान्त हैं–

1. अहुरमज़्दा को ईश्वर के रूप में स्वीकार करना।
2. आत्मा की अमरता में विश्वास करना।
3. मनुष्य अपने विचार, कर्म आदि के लिए स्वयं उत्तरदायी है। पारसी धर्म भावी जीवन में विश्वास करता है। मृत्यु के उपरान्त आत्मा मृत शरीर के चारों ओर तीन दिन तक परिभ्रमण करती है। मृत्यु के चौथे दिन आत्मा के कर्मो का मूल्यांकन किया जाता है, तब आत्मा का सम्बन्ध संसार से टूट जाता है। आत्मा के लिए 'उर्वन' शब्द का प्रयोग किया गया है। मनुष्य द्वारा किये गये सत् कर्म और असत् कर्म के लिए जिम्मेदार आत्मा है। आत्मा को उसके कर्मों के अनुसार पुरस्कार और दण्ड मिलता है। आत्मा कर्म करने के लिए पूर्णतः स्वतंत्र है। अवेस्ता के अनुसार–'' मनुष्य अपने शुभ और अशुभ कर्मो के द्वारा स्वर्ग तथा नरक का भागी होता है।'' धार्मिक व्यक्तियों की आत्मा स्वर्ग में जाती है। पारसी धर्म में स्वर्ग की चार अवस्थाओं को स्वीकार किया गया है– अच्छे विचार की अवस्था, अच्छे शब्दों की अवस्था, अच्छे कर्मों की अवस्था तथा अनन्त प्रकाश की अवस्था। क्रूर कर्म करने वाले अधार्मिक व्यक्तियों की आत्मा नरक में जाती है। स्वर्ग की भांति नरक की भी चार अवस्थाओं को माना गया है। ये चार अवस्थाएं इस प्रकार है – बुरे विचारों की अवस्था, बुरे शब्दों की अवस्था, बुरे कर्मों की अवस्था तथा अनन्त अन्धकार की अवस्था। पारसी धर्म के अनुसार प्रत्येक व्यक्ति अपनी मुक्ति के लिए स्वयं जिम्मेदार है। मुक्ति व्यक्ति के धार्मिक जीवन पर आधारित है। ज्ञान, भक्ति और कर्म मुक्ति के साधन है। इस धर्म में केवल वैयक्तिक मुक्ति पर ही बल नहीं दिया गया है अपितु सामूहिक मुक्ति पर बल दिया गया है। मनुष्य को केवल व्यक्तिगत मुक्ति की कामना ही नहीं करनी चाहिए अपितु समस्त मानव जाति की मुक्ति के लिए प्रयत्नशील रहना चाहिए। स्वयं शुभ बनना किन्तु दूसरों को शुभ बनाने के लिए सहायता न करना एक स्वार्थपूर्ण कार्य है। मानवीय जीवन

का उद्देश्य केवल निजी मुक्ति ही नहीं अपितु दूसरों को मुक्त करना है। जो मनुष्य सम्पूर्ण मानव जाति की मुक्ति की कामना करता है, Saviour कहलाता है। अन्तिम Saviour ईश्वर की सम्पूर्ण सृष्टि को मुक्त करेगा। असत्य, क्रोध, घृणा, दुःख, रोग, लालच और भय समाप्त हो जायेंगे। समस्त प्रकार के अशुभों का अन्त हो जायेगा। अहरिमान शक्तिहीन होकर अपनी पराजय स्वीकार कर लेगा। शुभ–अशुभ, सत्य–असत्य और धर्म–अधर्म का संघर्ष समाप्त हो जायेगा। अन्त में समस्त शुभत्व का आधार अहुरमजदा शेष रह जायेगा। पारसी–धर्म का यह दृष्टिकोण आशावाद से युक्त है।

नीतिशास्त्र– पारसी धर्म का नीतिशास्त्रीय दृष्टिकोण अत्यन्त महत्वपूर्ण है। नैतिक–आदर्शो की दृष्टि से इस धर्म का नीतिशास्त्र के इतिहास अद्वितीय स्थान है। परोपकार इस धर्म का सारभूत आदर्श है। सबके साथ ईमानदारीपूर्वक व्यवहार करना इस धर्म का मूल मंत्र है। मनुष्य को कर्ज सुविचार और सुव्यवहार के साथ अदा करना चाहिए। नम्रता, दया, प्रेम, शान्ति, सत्यवादिता आदि नैतिक मूल्यों को महत्व दिया गया है। पारसी धर्म में स्वावलम्बन और आत्मनिर्भरता को प्रमुख सद्गुण माना गया है। शुद्धता को इस धर्म में ईश्वर के बाद प्रमुख स्थान दिया गया है। इस धर्म में अहिंसा को स्वीकार किया गया है, किन्तु विशेष परिस्थितियों में हिंसा का पालन अधर्म नहीं माना गया है। सांप, बाघ आदि हिंसक जन्तुओं के प्रति हिंसा की अनुमति दी गई है। पारसी धर्म में प्रतिद्वन्दियों का शक्तिपूर्वक सामाना करने का आदेश दिया गया है। अवेस्ता में कहा गया है–''दुश्मनों के साथ दुश्मन जैसा व्यवहार करो और मित्रों के साथ मित्र जैसा व्यवहार करो।''

पारसी धर्म में अन्तिम संस्कार विशेष ढंग से सम्पन्न किया जाता है। पारसी धर्मावलम्बी मृत देह को न तो जलाते है और न ही जमीन में दफनाते हैं। शव को पत्थर के ऊंचे चबूतरों पर अथवा वृक्ष या पहाड की चोटी पर रखा जाता है। शव का उपयोग गिद्ध आदि जीव अपनी भोजन सामग्री के रूप में करते हैं। अग्नि, भूमि और जल को पारसी धर्मावलम्बी पवित्र मानते हैं। इस प्रकार शव का अंतिम संस्कार करने पर ये सब दूषित होने से बच जाते हैं।

बालक–बालिकाओं को पन्द्रह वर्ष की अवस्था में कुस्ती देना अनिवार्य माना गया है। कुस्ती भेड की ऊन के धागों से निर्मित होता है। भेड को निर्दोष प्राणी समझा जाता है। कुस्ती धारण करने वाले को भेड की तरह निर्दोष होना चाहिए। इस धर्म में सुरदेह धारण करने की प्रथा भी प्रचलित है। सुरदेह उजले कपडे से निर्मित होता है। उजला रंग पवित्रता का प्रतीक है। इसे धारण कर पारसी पवित्रता को शिरोधार्य करता है। पारसी धर्मावलम्बी पशुपालन में भी आस्था रखते हैं। गाय, कुत्ते, आदि जानवरों को रखना पवित्र माना गया है। इन पशुओं का पालन करना और इनकी रक्षा करना पारसी अपना कर्तव्य मानते हैं।

पारसी धर्म और हिन्दू धर्म– पारसी धर्म और हिन्दू धर्म में अनेक समानतयें हैं। जिस प्रकार हिन्दू धर्म का प्रारम्भिक स्वरूप अनेश्वरवादी था, उसी प्रकार पारसी धर्म का विकास भी अनेकेश्वरवाद से हुआ। हिन्दू धर्म का अन्तिम सर्वोच्च आदर्श एकेश्वरवाद है। जिस प्रकार विभिन्न देवी देवता एक ही पर ब्रह्म की अभिव्यक्तियाँ है, उसी प्रकार पारसी धर्म के अनुसार विभिन्न देवी–देवता एक ही अहुरमजदा की अभिव्यक्तियाँ हैं। जिस प्रकार हिन्दू धर्म ईश्वर को सृष्टा, पालनकर्ता और संहारकर्ता स्वीकार करता है। पारसी धर्म में भी ईश्वर को सृष्टा, पालनकर्ता और संहारकर्ता माना गया है। दोनों ही धर्म ईश्वर को सर्वव्यापक, सर्वज्ञ और सर्वशक्तिमान स्वीकार करते है।

हिन्दू धर्म की तरह पारसी धर्म भी वर्णव्यवस्था को स्वीकार करता है। हिन्दू धर्म में ब्राह्मण क्षत्रिय, वैश्य और शुद्र चार वर्ण स्वीकार किये गये है। पारसी धर्म में भी चार वर्ण हैं– 1. होरिस्तान (पुरोहित), 2. नूरीस्तान (योद्धा), 3. रोजिस्तान (कृषक) 4. मोरिस्तान (सेवक)। दोनों ही धर्मो में अग्नि को अत्यन्त पवित्र एवं आराधना का पात्र स्वीकार किया गया। पारसी धर्म में अग्नि पूजा को धर्माचरण का प्रमुख अंग माना गया है। पुरोहित का कर्तव्य है, अग्नि की देखभाल करना ताकि उसका उत्पादन और रक्षा की जा सके। इस प्रकार पारसी और हिन्दू धर्म में कुछ समानतायें दिखाई देती हैं।

(ii) सिख धर्म का सामान्य परिचय एवं विशेषताएं–

भारतीय धार्मिक विचारधाराओं में सिख धर्म का पवित्र एवं अनुपम स्थान है। गुरु नानक देव सिख धर्म के प्रथम गुरु एवं संस्थापक हैं। उन्होंने तत्कालीन भारतीय समाज में व्याप्त कुप्रथाओं, अन्धविश्वासों, रूढियों और पाखण्डों को दूर करते हुए जनसाधारण के मध्य एक उदारवादी धार्मिक विचारधारा को विकसित किया। उन्होंने प्रेम, सेवा, परोपकार, भ्रातृत्वभाव तथा परिश्रम की दृढ नींव पर आधारित सिख धर्म की स्थापना की। इस धर्म का विकास हिन्दू धर्म से हुआ है। जिस प्रकार जैन धर्म और बोद्ध धर्म हिन्दु धर्म की देन है। सिख धर्म धार्मिक परम्पराओं में समन्वय का एक अद्भुत उदाहरण है। मध्य युग में इस्लाम धर्म के सम्पर्क में आने पर हिन्दू–धर्म में समन्वय की एक नवीन प्रवृति का जन्म हुआ। हिन्दू धर्म एवं इस्लाम धर्म में समन्वय स्थापित करने के प्रयास के परिणामस्वरूप सिख धर्म का उद्भव हुआ।

'सिख' शब्द की उत्पत्ति शिष्य शब्द से हुई। प्रत्येक सिख स्वयं को एक शिष्य के रूप में स्वीकार करता है। शिष्य शब्द गुरु के बिना निर्रथक है। यही कारण है कि सिख धर्म में गुरू का स्थान केन्द्रिय है। गुरु महान पथ प्रदर्शक है। गुरु की शिक्षा के द्वारा ही ईश्वरीय ज्ञान सम्भव है। सच्चे गुरू के अभाव में मनुष्य ईश्वरीय ज्ञान के लक्ष्य को प्राप्त नहीं कर सकता। उचित

मार्गदर्शन के अभाव में वह अज्ञान ग्रस्त रहता है। गुरु ज्ञान के द्वारा ही शिष्य को यह ज्ञात होता है कि ईश्वर ही परमसत्ता सर्वव्यापी एवं सर्वज्ञ है। जो व्यक्ति शिष्य के रूप में गुरु के साथ तादात्म्य सम्बन्ध स्थापित करता है, वह खालसा कहलाता है। खालसा गुरु का अंश है। गुरु की महत्ता की व्याख्या करते हुए सिख धर्म में कहा गया है कि '' गुरु शिव है। गुरू ब्रह्मा एवं विष्णु है। गुरु ही पार्वती, सरस्वती एवं लक्ष्मी है।''

सिख धर्म में गुरू शिष्य परम्परा को अत्यन्त महत्वपूर्ण माना गया है। गुरु आध्यात्मिक जीवन के प्रमुख पथ प्रदर्शक है। गुरु शिष्य को उसके सामान्य स्तर से उठाकर उसे ईश्वरीय ज्ञान कराता है। गुरू पूर्णत्व का प्रतीक है। सभी सिख गुरुओ को पूर्ण माना गया है। गुरु नानक देव के अनुसार प्रत्येक मनुष्य गलती कर सकता है, केवल गुरु और ईश्वर ही इससे उपर हैं। यद्यपि गुरू पूर्णतः पाप से रहित होता है, किन्तु उसकी प्रकृति सामान्य मनुष्य जैसी होती है। गुरू आध्यात्मिक साधना के द्वारा अपनी स्वाभाविक मानवीय दुर्बलताओं पर विजय प्राप्त करता है। शिष्य गुरु को आदर्श स्वरूप मानकर उसका अनुसरण करता है। गुरु की शिक्षाओं के अनुसरण से शिष्य में परिवर्तन ही नहीं होता, अपितु यह गुरु से ओत–प्रोत हो जाता है। गुरुसे संयुक्त होकर शिष्य अनन्त शक्ति से युक्त हो जाता है, तब वह गुरु का मूर्तरूप अथवा 'खालसा' कहताता है। गुरु के अनुसार ''खालसा मेरा ही दूसरा रूप है, उसी में मेरा अस्तित्व है।'' इस प्रकार गुरु के साथ तादात्म्य सम्बन्ध शिष्य के अनन्त शक्ति को जाग्रत करता है।

सिख धर्म के प्रमुख गुरु– सिख धर्म के दस गुरुओं में से गुरु नानक देव प्रथम गुरु हैं। गुरु नानक देव ने अपने अयोग्य पुत्रों के स्थान पर श्री अंगद को अपना उत्तराधिकारी घोषित किया। अंगद ने नानक को ईश्वर तुल्य माना है। गुरु अंगद के बाद क्रमशः गुरु अमरदास, गुरु रामदास, गुरु अर्जुनदेव, गुरु हरगोविन्द सिंह, गुरु हरराय, गुरु हरकिशन सिंह, गुरु तेग बहादुर सिंह तथा गुरु गोविन्द सिंह सिखों के प्रमुख गुरु हैं। इन्होने सिख धर्म के प्रचार प्रसार का कार्य किया। सिख धर्म के दसवें एवं अन्तिम गुरु गोविन्द सिंह ने 'खालसा पंथ' की स्थापना की। गुरु गोविन्द सिंह ने मृत्यु के पूर्व कहा–'मेरे बाद कोई सिख गुरु नहीं होगा। सिर्फ 'ग्रन्थ साहिब ही गुरू होंगे।'

गुरु ग्रन्थ साहिब– 'गुरु ग्रन्थ साहिब' सिख धर्म का प्रमुख धर्म ग्रन्थ है। इसको सिख धर्म में अत्यन्त पवित्र माना गया है। इसमे सिख धर्म के प्रमुख गुरुओं की आध्यात्मिक वाणियाँ संग्रहित है। सिखों के पांचवे अर्जुन देव ने इस ग्रन्थ को संकलित कर इसे सुव्यवस्थित रूप प्रदान किया। इस ग्रन्थ में ईश्वरीय अनुभूति के लिए विभिन्न पवित्र उपदेश विद्यमान है। प्रत्येक सिख इस ग्रन्थ को ईश्वर तुल्य मानता है। सिख धर्म में गुरु ग्रन्थ साहिब की उपासना की जाती है।

सिख धर्म के पांच चिन्ह– सिखों के दसवें गुरु गोविन्द सिंह जी ने सिखों को एकजुट करके एक नई शक्ति को जन्म दिया। उन्होने खालसा पंथ की स्थापना की। सिखों को सैनिक वेश में दीक्षित किया। प्रत्येक परिस्थिति मे सदैव तत्पर रहने के लिये उन्होंने सिखों के लिये पांच ककार अनिवार्य घोषित किये, जिन्हें धारण करना प्रत्येक सिख अपना गौरव मानता है। ये इस प्रकार हैं –केश, कंघा, कच्छा, कडा, और कृपाण।

सिख धर्म में ईश्वर का स्वरूप– सिख धर्म एकेश्वरवादी धार्मिक विचारधारा है। इसमें ईश्वर को परमतत्व के रूप में स्वीकार किया गया है। यह अनेकेश्वरवाद को अस्वीकार करता है। गुरु नानक देव के अनुसार –''ईश्वर सिर्फ एक है जिसका नाम सत्य है। वह सृष्टा, भय और शत्रु भावना से शून्य है। वह अमर, अजन्मा, महान और दयालु है।'' जिस प्रकार उपनिष्दों और कुरान में ईश्वर की एकता पर विशेष बल दिया जाता है, उसी प्रकार सिख धर्म भी ईश्वर की एकता में विश्वास करता है। सिख धर्म सगुण और निर्गुण दोनो ही प्रकार के ईश्वर का समर्थन करता है, किन्तु अवतारवाद का समर्थन नहीं करता। ईश्वर एक ऐसा परमतत्व है, जिसे प्रेम, श्रद्धा और आत्मसमर्पण के द्वारा अनुभव किया जा सकता है। ईश्वरीय तत्व की अनुभूति करना मानवीय जीवन का चरम लक्ष्य है।

सिख धर्म में ईश्वर को सर्वव्यापी, सर्वशक्तिमान और सर्वज्ञ माना गया है। ईश्वर सर्वव्यापी है। जिस प्रकार आत्मा सम्पूर्ण शरीर में व्याप्त है, उसी प्रकार ईश्वर विश्व की प्रत्येक वस्तु में विद्यमान है। गुरु नानक देव का कथन है–''ईश्वर प्रत्येक वस्तु में व्याप्त है। वह प्रत्येक हृदय में निवास करता है। यद्यपि वह प्रत्येक वस्तु में व्याप्त है, फिर भी वह प्रत्येक वस्तु से पृथक है। जिस प्रकार खुशबू फूल में व्याप्त है तथा प्रतिबिम्ब शीशे में निहित है, उसी प्रकार ईश्वर विश्व की प्रत्येक वस्तु में अन्तर्भूत है। इसलिए ईश्वर को सर्वत्र व्याप्त मानते हुए उसे अपने हृदय के अन्दर खोजना चाहिए। गुरु नानकदेव ने स्वयं ईश्वर की सर्वव्यापकता की व्याख्या करते हुए कहा–''उस एक के सम्बन्ध में विचार करो जो प्रत्येक वस्तु में व्याप्त है।'' गुरु नानक द्वारा जुपजी को प्रमुख भजन के रूप में स्वीकार किया गया है। इसे प्रतिदिन प्रातःकाल प्रार्थना के रूप में गाया जाता है। इस भजन की प्रथम पंक्ति में ईश्वर के स्वरूप की व्याख्या इस प्रकार की गई है –''परमात्मा ओंकार स्वरूप एक है। उसका नाम सत्य है, वह रचने वाला है। वह भय और वैर से रहित है। वह काल से अप्रभावित है। वह अजन्मा है। वह स्वयं प्रकाशमान है। वह गुरु की कृपा से प्राप्त होता है।''

सिख धर्म के अनुसार ईश्वर एक है, किन्तु इसके रूप अनेक है। इस धर्म में ईश्वर को विभिन्न नामों से पुकारा गया हैं। गुरु ग्रन्थ साहिब में ईश्वर को अल्लाह, खुदा, ब्रह्म परब्रह्म, हरि,

राम, गोविन्द, नारायण आदि नामों से सम्बोधित किया गया है। ईश्वर को इन विभिन्न नामों से सम्बोधित कर सिख धर्म के गुरुओं ने हिन्दू एवं इस्लाम धर्म में समन्वय का प्रयास किया हैं। गुरु ग्रन्थ साहिब में ईश्वर को निराकार, आदि पुरुष, अकाल पुरुष, सत पुरुष कहा गया है। गुरु दास ने ईश्वरीय स्वरूप की व्याख्या करते हुए कहा है–''वह निरंकार, अनूठा, अदभूत एवं इन्द्रियातीत है।'' ईश्वर के सगुण स्वरूप को स्वीकार करते हुए उसे ब्रह्मा, विष्णु और विश्व कहा गया है। इस प्रकार सिख धर्म ईश्वर को सगुण और निर्गुण दोनों रूपों में स्वीकार करता है। गुरू नानक देव कर्म और पुनर्जन्म दोनों मे विश्वास करते हैं। गुरु नानक देव के मतानुसार पुनर्जन्म और मुक्ति दोनो ईश्वर की इच्छा पर निर्भर करते हैं। सिख धर्म में ईश्वर को कर्म नियम का संचालक माना गया है। ईश्वर मनुष्य को उसके शुभ अशुभ कर्मो के अनुसार पुण्य पाप प्रदान करता है।

मनुष्य सम्बन्धी विचार– सिख धर्म के अनुसार ईश्वर और मनुष्य में स्वामी और दास का सम्बन्ध है। ईश्वर सर्वशक्तिमान, शाश्वत और स्वतंत्र है, जबकि मनुष्य सीमित, नश्वर और ईश्वर पर आश्रित है। जब तक मनुष्य यह समझता है कि वह स्वयं सब कुछ कर सकता है, तब तक उसे शाश्वत आनन्द की प्राप्ति नहीं हो सकती है। ईश्वर की कृपा के अभाव में मनुष्य कुछ भी नहीं कर सकता है। ईश्वर ही मनुष्य को शक्ति प्रदान करता है, जिसके द्वारा वह अपने लक्ष्यों को प्राप्त कर सकता है। ईश्वर की कृपा के अभाव में मनुष्य मुक्ति का अधिकारी नहीं हो सकता। अतः मनुष्य पूर्णतः ईश्वर पर आश्रित है। गुरु गोविन्द सिंह ने ईश्वर और मनुष्य के मध्य उपास्य और उपासक का सम्बन्ध स्वीकार किया है। ईश्वर उपास्य है, जबकि मनुष्य उपासक। यद्यपि उपास्य और उपासक दो है, किन्तु इन दोनों में तादात्म्य सम्बन्ध है। जिस प्रकार समुद्र और उसकी तरंगे एक है, उसी प्रकार ईश्वर और उपासक भी स्वरूपतः एक ही हैं।

जगत सम्बन्धी विचार– सिख धर्म में जगत को नश्वर माना गया है। जगत को भ्रम के रूप में चित्रित किया गया है। गुरु नानक देव के अनुसार– ''मैं किसके साथ सम्पर्क स्थापित करूँ ? सारा जगत क्षणभंगुर है। ईश्वर तुझे छोड़कर सभी वस्तुएं असत्य है।'' गुरु नानक ने कहा है–''विश्व के सारे व्यापार नश्वर है। ये सिर्फ चार दिनों के लिए विद्यमान है। यह संसार भ्रम है।'' उन्होने स्पष्ट किया है कि ब्रह्म एक है तथा सम्पूर्ण जगत ब्रह्म की माया है। माया के द्वारा ही जगत के सभी पदार्थ उत्पन्न हुए हैं। गुरुनानक का यह विचार उपनिषदों के ऋषियों के विचारों के अनुरूप है।

अशुभ की समस्या का समाधान– ईश्वरवादी धर्मो के समक्ष अशुभ की समस्या एक प्रमुख समस्या है। लगभग सभी ईश्वरवादी धर्म इस समस्या के समाधान के लिए प्रयास करते हैं। सिख धर्म में अशुभ की समस्या का समाधान अत्यन्त सरल ढंग से किया गया है। सिख धर्म के अनुसार अशुभ का कारण ईश्वर नहीं अपितु मनुष्य स्वयं है। अशुभ का प्रमुख कारण मानवीय अहंकार है। मानवीय हृदय जब अहंकार से युक्त हो जाता है, तब उसे अशुभ का सामना करना पडता है। मनुष्य का अहंकार उसे ईश्वर के समक्ष समर्पण नहीं करने देता है। जैसे ही वह ईश्वर के समक्ष समर्पण के लिए उपस्थित हेाता है, उसका अहंकार इसमें बाधक बन जाता है। जिसके परिणामस्वरूप वह ईश्वर से दूर हो जाता है। यही अशुभ है। यदि मनुष्य को यह ज्ञान हो जाये कि ईश्वर सर्वत्र व्याप्त है और उसके अत्यन्त निकट है, तो वह अशुभ से मुक्त हो जायेगा। ईश्वर से संयोग ही शुभ और ईश्वर से दूरी ही अशुभ है। अहंकार की अधिकता के कारण मनुष्य ईश्वर से दूर चला जाता है। अतः मनुष्य को चाहिए कि वह अपने अहंकार को परित्याग करे, अन्यथा उसे अशुभ का सामना करना होगा। अहंकार पर विजय प्राप्त कर ही मनुष्य ईश्वर की अनुभूति कर सकता है। ईश्वरीय अनुभूति और निकटता ही समस्त अशुभों का अन्त है। इस प्रकार सिख धर्म में अशुभ और शुभ की व्याख्या तर्क संगत ढंग से की गई है।

मुक्ति का मार्ग– सिख धर्म के अनुसार मुक्ति का अभिप्राय है– मनुष्य का ईश्वर से साक्षात्कार करना या ईश्वर में विलीन होना है। मुक्ति की प्राप्ति ईश्वर की कृपा के अभाव में असम्भव है। उपनिषदों में भी ऋषियों ने मुक्ति को ईश्वरीय कृपा का फल माना है। मुक्ति के लिए ईश्वर के नाम का सतत चिन्तन और उच्चारण करना अत्यन्त आवश्यक है। ईश्वर के प्रति ध्यान एवं चिन्तन के द्वारा ही मनुष्य मुक्ति का अनुभव कर सकता है। ईश्वर के प्रति श्रद्धा, भक्ति और आत्म समर्पण के द्वारा मनुष्य मुक्त हो जाता है। सिख धर्म में मुक्ति के लिए भक्ति को प्रमुख साधन माना गया है। गुरु नानक देव के कथनानुसार –''धार्मिक क्रिया कलापों के सम्पादन के द्वारा ईश्वर की प्राप्ति नहीं हो सकती। ईश्वर की प्राप्ति प्रेम और श्रद्धा के द्वारा ही सम्भव है।'' गुरु ईश्वर प्राप्ति में सहायक होता है। गुरु के उपदेशों को शिरोधार्य करना वांछनीय है, क्योंकि वही मुक्ति के मार्ग का पथ प्रदर्शन कर सकता है। गुरु में ईश्वरत्व निहित है। इसलिए वह साधक और ईश्वर के मध्य कडी का कार्य करता है। जुपजी (जपजी) गुरू ग्रन्थ साहिब के प्रमुख भजन में गुरु नानक देव ने मुक्ति का वर्णन अत्यन्त सरल भाषा में किया है। गुरु नानक देव ने जुपजी में पांच सोपानों का उल्लेख किया है, जिसके द्वारा आत्मा शाश्वत आनन्द की अनुभूति करती है। ये पांच सोपान इस प्रकार है– 1. धर्म खण्ड, 2. ज्ञान खण्ड, 3. शरण खण्ड, 4. कर्म खण्ड तथा, 5. सुच–खण्ड। इन खण्डों का वर्णन निम्नानुसार है –

1. धर्म खण्ड– यह कर्तव्य और कर्म का क्षेत्र है। प्रत्येक

मनुष्य को अपने कर्तव्य कर्मो का सम्पादन भली भांति करना चाहिए। यह इसलिए आवश्यक है कि प्रत्येक मनुष्य का मूल्यांकन उसके कर्मो के द्वारा ही सम्भव होता है।

2. ज्ञान खण्ड– यह ज्ञान की अवस्था है। ज्ञान और कर्त्तव्य के मध्य समन्वय आवश्यक है। यदि मनुष्य ज्ञानपूर्वक कर्त्तव्य का सम्पादन करता है तो वह राम–कृष्ण की भांति स्थायी शान्ति अनुभव कर सकता है।

3. शरण खण्ड– ज्ञान खण्ड के पश्चात आत्म समर्पण की अवस्था है। यह आनन्द की अवस्था है। इस अवस्था में कर्तव्य पालन मानवीय स्वभाव का अंग बन जाता है और वह स्वाभाविक रूप से सम्पन्न होता है।

4. कर्म खण्ड– इस अवस्था में साधक को शक्ति और धार्मिक निष्ठा की प्राप्ति होती है। साधक मृत्यु के भय से मुक्त हो जाता है। वह जन्म मरण के चक्र से सदैव के लिए मुक्त हो जाता है।

5. सुच खण्ड– कर्म खण्ड के पश्चात आत्मा सुच खण्ड में प्रवेश करती है। यह निराकार परमात्मा का निवास स्थल है। आत्मा इस अवस्था में निरंकार सत्य का दर्शन करती है। यह सत्यानुभूति की अवस्था है। यहां साधक ईश्वर में विलीन होकर उसके स्वरूप की साक्षात अनुभूति करता है। कुछ सिख धर्म के चिन्तकों का मत है कि निर्वाण और सुच खण्ड वस्तुतः एक ही हैं। दोनों ही अवस्थाओं में व्यक्तिगत चेतना का अन्त हो जाता है और आत्मा का प्रकाश ईश्वरीय प्रकाश के साथ संयुक्त हो जाता है।

गुरू नानक देव के उपदेश– सिख–धर्म के संस्थापक गुरु नानक देव का जन्म कार्तिक पूर्णिमा के दिन हुआ था। इस दिन को सिख–धर्म के अनुयायी प्रकाश पर्व और गुरु–पर्व के रूप में मनाते है। गुरु नानक देव ने भ्रातृत्वभाव मानव–सेवा, आत्मशुद्धि, कर्तव्य, पालन और ईश्वरीय भक्ति का संदेश दिया। गुरु नानक देव के कुछ प्रमुख उपदेश निम्नानुसार है :–

1. गुरू नानक देव ने एक ओंकार का संदेश दिया, जिसका अर्थ है कि ईश्वर एक है। ईश्वर सर्वत्र व्याप्त है। ईश्वर हम सबका पिता है, इसलिये सबके साथ प्रेमपूर्वक रहना चाहिए।
2. किसी भी प्रकार के लोभ को त्याग कर अपने हाथों से मेहनत कर और न्यायोचित तरीके से ईमानदारी पूर्वक धन का अर्जित करना चाहिए।
3. कभी किसी का हक नहीं छिनना चाहिए अपितु मेहनत और ईमानदारी की कमाई में से भी जरूरतमंदों की सहायता करनी चाहिए।
4. धन को जेब तक ही सीमित रखना चाहिए। उसे अपने हदय में स्थान नहीं देना चाहिए अन्यथा नुकसान हमारा ही होता है।
5. नारी–शक्ति का सम्मान करना चाहिए। स्त्री और पुरूष एक ही परमात्मा की संताने है, अतः उन्हे भी पुरूषों के समान आदर देना चाहिए।
6. तनाव मुक्त होकर अपने कर्म करना चाहिए तथा सदैव प्रसन्न रहने का अभ्यास करना चाहिए।
7. संसार को जीतने से पहले स्वयं अपने विकारों और बुराईयों पर विजय प्राप्त करना अति आवश्यक है। आत्मशुद्धि ही ईश्वर साक्षात्कार का प्रमुख साधन है।
8. अहंकार मनुष्य का सबसे बडा शत्रु है। इसलिए अहंकार का त्याग करना चाहिए और विनम्र होकर सेवाभाव के द्वारा जीवन व्यतीत करना चाहिए।
9. मनुष्य को मनुष्य के साथ प्रेमवत व्यवहार करना चाहिए। सभी मनुष्य के मध्य भ्रातृत्वभाव का विकास आवश्यक है। मनुष्यों में उच्च और निम्न का भेद करना भ्रामक है। सभी मनुष्य एक ही ईश्वर की संतान है। मानव–सेवा करना मनुष्य का परम कर्तव्य है।
10. सर्वशक्तिमान ईश्वर की भक्ति करने वालों को कभी किसी का भय नहीं रहता है।

(iii) ताओ धर्म (Taoism) का सामान्य परिचय एवं विशेषताएं :

ताओ धर्म चीन का प्रमुख एवं प्राचीनत्म धर्म है। इस धर्म के संस्थापक लाओत्सी हैं। लाओत्सी ने ताओ धर्म को आदर्शवाद की आधारशिला पर स्थापित किया। इन्होंने ताओ धर्म का नामकरण इस धर्म के मूल सिद्धान्त ताओ (Tao) के आधार पर किया। इस दृष्टिकोण से यह धर्म विश्व के कुछ प्रमुख धर्मों से विशिष्ट है। विश्व के अधिकांश धर्मों का नामकरण उनके संस्थापकों के नाम पर किया गया है, जैसे बौद्ध धर्म, ईसाई धर्म, जरशुस्त्र धर्म, कनफ्युसियस धर्म आदि। ताओ–धर्म अध्यात्मवाद और रहस्यवाद से युक्त हैं। इस धर्म में संन्यासवाद पर विशेष बल दिया गया है। इस धर्म के अनुयायियों को एकान्तवास का पालन करना होता है। यह धर्म सांसारिक विषय भोगों को क्षणिक मानता है।

ताओ धर्म और कनफ्युसियस धर्म दोनों चीन के प्रमुख धर्म हैं। किन्तु इनमें कुछ अन्तर है। ताओं धर्म का विकास विशिष्ट पुरूषों के लिये हुआ था, जबकि कनफ्युसियस धर्म का विकास जनसाधारण के लिये हुआ था। जहां ताओ धर्म में दार्शनिकता की प्रधानता है, वहीं कनफ्युसियस धर्म मे नीतिशास्त्र की प्रधानता है। ताओ धर्म का मुख्य उद्देश्य परम तत्व के स्वरूप का विश्लेषण करना है, वही कनफ्युसियस धर्म का उद्देश्य उत्तम मानवता की प्राप्ति करना है। चीन में इन दोनों धर्मों के अतिरिक्त बौद्ध धर्म भी प्रचलित है। चीन में ताओ,

कनफ्युसियस धर्म और बौद्ध धर्म इस प्रकार धुल–मिल गए हैं कि इन्हे एक दुसरे से अलग करना आसान नहीं है।

ताओ धर्म का प्रमुख धर्म ग्रन्थ ताओ–धर्म का प्रमुख धर्म ग्रन्थ Tao Teh King (ताओ तेह किंग) है, यह धर्म ग्रन्थ नैतिक उपदेशों से परिपूर्ण है। इस ग्रन्थ में नैतिक सदाचार एवं बौद्धिक सिद्धान्तों का प्रतिपादन किया गया है। इस ग्रन्थ में प्रतीकों के माध्यम से जगत के पदार्थों एवं इसके पारस्परिक सम्बन्धों की व्याख्या की गई है। यह चीन में अत्यन्त आदरणीय है। चीन में यह राज्य के नियम की तरह प्रतिष्टित है। यह ग्रंथ चीन की सभ्यता एवं संस्कृति का परिचायक है। एक चीनी लेखक ने इस पुस्तक की प्रशंसा में कहा है– ''सम्पूर्ण पूर्वी साहित्य में यदि कोई ऐसी पुस्तक है जिसका अध्ययन अन्य पुस्तकों की अपेक्षा वाछनीय है तो वह लाओत्सी लिखित ''Book of Tao'' है। यदि कोई ऐसी पुस्तक है जो पूरब की विशेषताओं का दिग्दर्शन कराती हो तथा चीन की सभ्यता एवं प्रचलन का पूर्ण विवेचन करती है तो Book of Tao है। यह विश्वदर्शन सम्बन्धी गहनतम् रचना है।'' ताओ धर्म का केन्द्र बिन्दु ताओ (Tao) सम्बन्धी अवधारणा है। यह सम्पूर्ण ताओ धर्म का आधार है। ताओ अतिरिक्त दूसरी महत्वपूर्ण अवधारणा तेह है। ताओ धर्म ताओ और तेह पर आधारित है।

ताओ की अवधारणा– ताओ सम्पूर्ण प्रकृति का आधार है। प्रकृति ताओ के द्वारा नियमित नियंत्रित और शासित होती है। यह चरम तत्व अगोचर है। ताओ के स्वरूप का ज्ञान सामान्यजन के लिये कठिन है। ताओ के रूवरूप की व्याख्या को ताओवादी चिन्तक हउया–नन–तजु (Hua-Nan -Tzu) ने इस प्रकार की है :–

1. ताओ स्वर्ग का आधार है और पृथ्वी में व्याप्त है। इसकी कोई परिधि नहीं है। यह सीमा से रहित है। इसकी उंचाई को नही नापा जा सकता । इसकी गहराई को नही आंका जा सकता। यह सम्पूर्ण विश्व को अपने अधीन रखता है। यह अगोचर है किन्तु समस्त गोचर पदार्थो का जनक है।
2. यह अत्यन्त सूक्षम है। ताओ के कारण पर्वत ऊँचा है तथा समुद्र गहरा है। ताओ के कारण पशुगण विचरण करते हैं तथा पक्षीगण आकाश में उडते हैं। यह ताओं का ही प्रभाव है कि सूर्य और चन्द्रमा चमकते हैं। ताओ के कारण ही तारे अपनी दिशाओ में गमन करते हैं।
3. ताओ का कार्य दिखाई नहीं देता। वह गुप्त एवं आकारविहिन है। यद्यापि यह आकार विहिन है फिर भी यह सभी वस्तुओं को क्रियान्वित करता है। इसका कार्य व्यर्थ नहीं जाता।

ताओं के उपरोक्त विवेचन से स्पष्ट है कि यह द्रव्य सम्बन्धी विचार है। ताओ एक पूर्ण अगोचर सत्ता है। यह शाश्वत है। यह अदृश्य एवं अद्भुत है। यह अवर्णनीय है। यह अपरिभाषेय है। यह इन्द्रियातीत है। ताओ ही वह तत्व है जिससे सम्पूर्ण जगत की वस्तुओं का निर्माण हुआ है। अन्त में सभी वस्तुएं ताओं में ही लीन हो जाती है। ताओ जगत की वस्तुओं का सृष्टा, पालक और रक्षक है, इसलिए उसे ईश्वर तुल्य माना गया है। यह नैतिकता का आधार है। यह शान्ति और पूर्णता का दायक है। ताओ धर्म के अनुसार ताओ को प्राप्त करने के लिए पवित्रता, विनय, करूणा, सन्तोष, दया एवं आत्मसंयम मुख्य साधन है। ध्यान और प्राणायाम इसके सहायक है। चित्त में शांति का उदय तभी हो सकता है, जब उसे संसार से हटाकर एक लक्ष्य पर केन्द्रित किया जाये। यह कार्य ध्यान और प्राणायम के द्वारा सम्भव है।

ताओ के तीन अर्थ– ताओ का शाब्दिक अर्थ मार्ग अथवा रास्ता होता है। लाओत्सी ने अपने प्रमुख ग्रन्थ 'Tao The King' जिसे ताओ धर्म का बाईबिल कहा जाता है, में ताओ के तीन अर्थों का उल्लेख किया है। जो इस प्रकार है :–

1. प्रथम अर्थ के अनुसार ताओ चरम का मार्ग है। ताओ का हमें प्रत्यक्षीकरण नहीं होता क्योंकि यह इन्द्रियातीत है। ताओ का ज्ञान विचार के द्वारा भी सम्भव नहीं है। शब्द इसका वर्णन करने में असमर्थ है। यह अपरिभाषेय है। यह अवर्णनीय है। यह विश्वातीत है। यह सभी वस्तुओं में व्याप्त है। सभी वस्तुओं का उद्भव ताओ से होता है और अन्त में सभी उसमें विलीन हो जाती है। यह एक रहस्यात्मक सत्ता है। इसका ज्ञान रहस्यानुभूति के द्वारा होता है। इसलिए ताओवाद का कथन है–''जो जानते हैं वे कह नहीं सकते और जो कहते हैं वे जान नहीं पाते है।''
2. द्वितीय अर्थ के अनुसार ताओ विश्व का मार्ग है। यह विश्व की मूल शक्ति है। ताओ मूलतः विश्वातीत है। यह विश्वव्यापी भी है। यह प्रकृति की संचालक शक्ति है। यह प्रकृति की समस्त वस्तुओं को व्यवस्थित करता है। ताओ अचेतन नही मूलतः आत्मा है। यह परोपकारी है। यह अनन्त उदार है। यह निरन्तर गत्यात्मक है। इसे जगत की माता की संज्ञा दी जा सकती है।
3. तृतीय अर्थ के अनुसार ताओ उस मार्ग का संकेत करता है, जिसके द्वारा मनुष्य अपने जीवन में व्यवस्था कायम कर सकता है। जिससे मनुष्य और प्रकृति के मध्य सामंजस्य की स्थापना हो सके।

चीन में तीन प्रकार के ताओ धर्मो का विकास हुआ। चीन में विकसित पहला ताओ धर्म वह है, जिसमें जादू की प्रधानता है। ताओ धर्म के इस प्रकार को लोकप्रिय ताओवाद (Popular Taoism) कहा गया। ताओ धर्म का विकसित दूसरा रूप रहस्यवाद से परिपूर्ण हैं। इस प्रकार के ताओवाद को गुप्त

ताओवाद (Esoteric Taoism) कहते है। ताओवाद का तीसरा प्रकार दर्शन शास्त्र एवं तत्वशास्त्र से परिपूर्ण है। ताओवाद के इस स्वरूप को दार्शनिक ताओवाद (Philosophical Taoism) कहते है, वर्तमान में दार्शनिक ताओवाद ही चीन की जनता का मार्गदर्शन कर रहा है।

तेह सम्बन्धी अवधारणा– ताओ की प्राप्ति को तेह की संज्ञा दी गई है। तेह की व्याख्या जीवन, प्रेम, प्रकाश और संकल्प के द्वारा सम्भव है। लाओत्सी ने तेह को आत्मसिद्धि (Self realization) की संज्ञा दी। ताओ के प्रकाशित स्वरूप को तेह कहा जाता है। ताओ एक है किन्तु तेह अनेक है। ताओ तेह का स्वामी है। तेह मातृ शक्ति है जिसके द्वारा सम्पूर्ण नैतिक, मानसिक और आध्यात्मिक जीवन का विकास होता है। यह स्वर्ग और पृथ्वी का आधार है। तेह सदगुण का पर्याय है। यह वह शक्ति है, जिससे न्याय की स्थापना होती है। यह वास्तविकता है। इस पर संदेह नहीं किया जा सकता है। तेह का मानवता से घनिष्ट सम्बन्ध है। यह समस्त मानवीय कर्मो में प्रविष्ट है। तेह मानवीय चेतना के रूप में स्वयं को प्रकाशित करती है। तेह को अनेक नामों जैसे–ईश्वर, बुद्धि, प्रकृति, उत्तम जीवन, न्याय–परायण, प्रेम आदि से सम्बोधित किया गया है।

ताओ धर्म में प्रकृति का स्थान– ताओ धर्म में प्रकृति का महत्वपूर्ण स्थान है। इस धर्म के अनुसार प्रकृति केवल जडमात्र नहीं है। यह क्रियाशील है। मनुष्य और प्रकृति के मध्य घनिष्ट सम्बन्ध है। मनुष्य और प्रकृति में साम्य है, इसलिए ताओ–धर्म मनुष्य और प्रकृति के मध्य मित्रता स्थापित करने का आदेश देता है। प्राच्य परम्परा का समर्थन करते हुए ताओ धर्म मनुष्य और प्रकृति के मध्य आत्मीय सम्बन्ध की स्थापना पर बल देता है। प्राच्य परम्परा के विपरीत पाश्चात्य परम्परा में प्रकृति और मनुष्य मध्य निरन्तर संघर्ष जारी है। मनुष्य प्रकृति पर विजय प्राप्त करना चाहता है। ताओवाद ने पाश्चात्य परम्परा को अस्वीकार कर प्राच्य परम्परा का समर्थन किया है। प्रकृति के साथ सामंजस्य के द्वारा ही मनुष्य वास्तविक आनन्द अनुभव कर सकता है। ताओ–धर्म में मंदिरों की स्थापना प्राकृतिक सौन्दर्य के मध्य हुई है। पर्वत, नदी, वृक्ष एवं झरनों के मध्य मंदिरों को स्थापित करके ताओवाद ने प्रकृति के प्रति अपने अनन्य भाव को अभिव्यक्त किया है।

लाओत्सी के प्रमुख उपदेश– ताओ धर्म में साधुजनों के लिए स्थान हैं। सन्त वही है जिसके मन में किसी प्रकार की आकांक्षा नहीं हो। जिसमें स्वयं के स्वार्थपूर्ति हेतु कोई लक्ष्य न हो। जो पश्चाताप से स्वतंत्र हो। साधु वही है जिसे मृत्यु से भय नहीं हो तथा जो प्रेम, घृणा, हानि, लाभ, मान, अपमान से परे हो। ताओ धर्म में पुनर्जन्म और आत्मा की अमरता को स्वीकार किया गया है। लाओत्सी ने कहा है– जन्म न आरम्भ है और न मृत्यु अन्त अनादिकाल तक आत्मा अमर है। लाओत्सी के प्रमुख उपदेश इस प्रकार है: –

1. मेरे पास तीन वस्तुएं है जिन्हें मैं दृढतापूर्वक पालन करता रहता हूं–1. नम्रता 2. दयालुता 3. मितव्ययता।
2. वह मनुष्य धन्य है जो साधुवचन बोलता है। साधु बातें सोचता है और साधु के प्रति मनन शील रहता है।
3. मधुर वचन यथार्थ नहीं होता तथा निष्कपट वचन मधुर नहीं होता है।
4. जो मनुष्य विद्वता का अभिमान नहीं करता है, वह सन्ताप से मुक्त है।
5. चाह से बढकर कोई विपत्ति नहीं है तथा असन्तोष से बढकर कोई दुःख नहीं है।
6. विनम्रता, पवित्रता और इच्छाओं को संयत रखना महान धर्म है।
7. निष्काम की प्रवृति को बढावा देना तथा अत्यधिक शान्ति की स्थापना मानवीय जीवन का पुनीत कर्तव्य है।
8. शान्ति, संन्यास और विनयशीलता मिट्टी, वायु और सूर्य के तुल्य है। इनके सहयोग से आध्यात्मिक जीवन का विकास होता है।
9. जिसका मन हर वस्तु के प्रति उदासीन है, वही सच्चा साधु है।
10. अच्छों के प्रति मैं अच्छा रहूंगा तथा बुरों के प्रति भी मैं अच्छा रहूंगा ताकि उन्हें अच्छा बनाने में सफल हो सकूं।

अभ्यास के लिए प्रश्न

बहुविकल्पात्मक प्रश्न–

1. पारसी धर्म में ईश्वर को कहा गया है ?
   (अ) अहरिमान (ब) अंगरामेन्यु
   (स) स्पेनतामेन्यु (द) अहुरमजदा
2. पारसी धर्म के प्रमुख ग्रन्थ अवेस्ता कौनसा भाग नहीं है?
   (अ) यश्त (ब) वेन्दिदाद
   (स) विस्पेरद (द) सेवियर
3. कौनसा वर्ण पारसी धर्म में स्वीकृत नहीं है ?
   (अ) नूरिस्तान (ब) होरिस्तान
   (स) रोजिस्तान (द) फोरिस्तान
4. पारसी धर्म में अशुभ के देवता को कहा गया है ?
   (अ) अहरिमान (ब) अहुरमजदा

(स) सेवियर (द) स्पेनतामेन्यु

5. सिख धर्म में सिख शब्द का क्या अर्थ है ?
(अ) शिक्षा (ब) शिष्य
(स) सृष्टि (द) सृजन

6. सिख धर्म है ?
(अ) एकेवरवादी (ब) द्वैतवादी
(स) अनेकेवरवादी (द) सर्वेवरवादी

7. गुरू ग्रन्थ साहिब को व्यवस्थित रूप प्रदान किया ?
(अ) गुरू अर्जुनदेव ने (ब) गुरू गोविन्द सिंह ने
(स) गुरू नानक देव ने (द) गुरू अंगद ने

8. खालसा पंथ की स्थापना किसने की?
(अ) गुरू हरिराय ने (ब) गुरू हरिकृष्ण
(स) गुरू गोविन्दसिंह (द) गुरू हरगोविन्द सिंह

9. ताओ धर्म के प्रवर्तक है ?
(अ) लाओत्सी (ब) ताओ तेहकिंग
(स) चाल्मुर (द) कोजकी

10. ताओ का शाब्दिक अर्थ है ?
(अ) मार्ग (ब) मूलशक्ति
(स) मार्गदर्शन (द) आत्मशक्ति

11. ताओ धर्म के प्रमुख धर्मग्रन्थ का नाम है ?
(अ) ताओ तेह किंग (ब) कोजकी
(स) अवेस्ता (द) जिन्द

12. लाओत्सी ने तेह को कहा ?
(अ) प्रकाश (ब) आत्मसिद्धि
(स) स्वप्रकाश (द) आत्मप्रकाश

अतिलघुतरात्मक प्रश्न–

1. 'जरथुस्त्र' शब्द के अर्थ को स्पष्ट कीजिए ?
2. अवेस्ता के पांच भागों के नाम लिखिए ?
3. पारसी धर्म के चार वर्णो के नाम बताइए।
4. पारसी धर्म में आत्मा के लिए प्रमुख नाम को स्पष्ट कीजिए ?
5. ताओ धर्म के तीन प्रकारों का उल्लेख कीजिए ?
6. गुप्त ताओवाद किसे कहते है ?
7. दार्शनिक ताओवाद किसे कहते है?
8. ताओ का प्रकाशित या अभिव्यक्त रूप क्या कहलाता है ?
9. सिख धर्म में पांच ककार स्पष्ट कीजिए?
10. सिख धर्म के धार्मिक ग्रन्थ के बारे में बताइए।
11. सिख धर्म के अनुसार अशुभ की समस्या का प्रमुख कारण क्या है ?
12. सिख धर्म के पांच सोपानों को बताइए, जिनके द्वारा शाश्वत आनन्द की प्राप्ति होती है।

लघुत्तरात्मक प्रश्न–

1. सिख धर्म में अशुभ की समस्या को स्पष्ट कीजिए?
2. सिख धर्म में गुरू की भूमिका को स्पष्ट कीजिए?
3. सिख धर्म में ईश्वर के स्वरूप को स्पष्ट कीजिए?
4. सिख धर्म में जगत सम्बन्धी विचार स्पष्ट कीजिए?
5. पारसी धर्म में अहरिमान के स्वरूप को स्पष्ट कीजिए?
6. पारसी धर्म के मूल सिद्धान्तों की व्याख्या कीजिए?
7. पारसी धर्म और हिन्दू धर्म में समानताओं को स्पष्ट कीजिए?
8. ताओ धर्म में ताओ की अवधारणा को स्पष्ट कीजिए?
9. ताओ धर्म में तेह की अवधारणा को स्पष्ट कीजिए?
10. ताओ धर्म और कन्फ्यूसियस धर्म में अन्तर स्पष्ट कीजिए।

निबन्धात्मक प्रश्न –

1. पारसी धर्म में अशुभ की अवधारणा को विस्तार से स्पष्ट कीजिए।
2. पारसी धर्म में ईश्वर के स्वरूप को स्पष्ट कीजिए।
3. गुरूनानक देव के प्रमुख उपदेशों की व्याख्या कीजिए।
4. ताओ धर्म में ताओ और तेह की अवधारणा की विस्तृत व्याख्या कीजिए।

बहुविकल्पात्मक प्रश्नों के उत्तर–

1. (द)	2. (द)	3. (द)
4. (अ)	5. (ब)	6. (अ)
7. (अ)	8.(स)	9. (अ)
10.(अ)	11.(अ)	12.(ब)